विशद

श्री अनन्तनाथ विधान

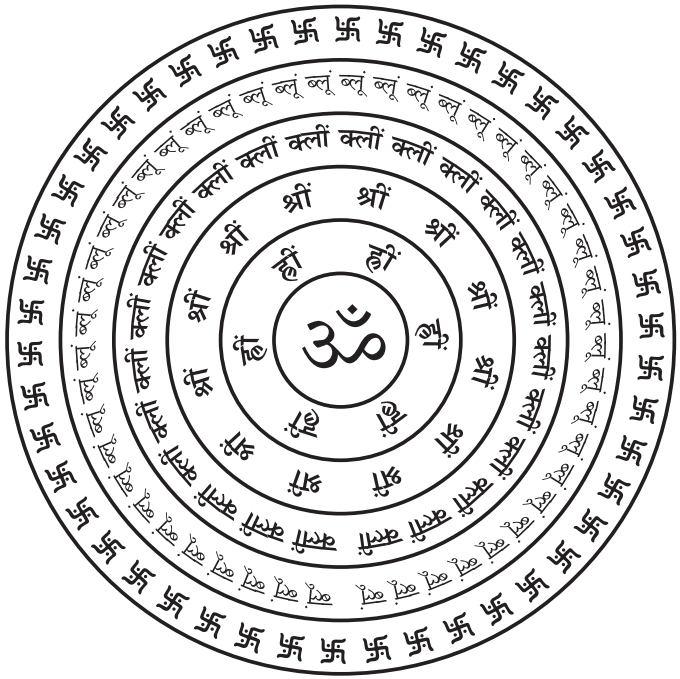

मध्य में	ॐ
प्रथम	06
द्वितीय	12
तृतीय	24
चतुर्थ	48
पंचम	46

रचयिता

प. पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य
श्री 108 विशदसागरजी महाराज

कृति	:	**विशद श्री अनन्तनाथ विधान**
कृतिकार	:	प. पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज
संस्करण	:	प्रथम-2013 * प्रतियाँ : 1000
संकलन	:	मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज
सहयोगी	:	क्षुल्लक श्री 105 विदर्शसागरजी महाराज, क्षुल्लक श्री 105 विसोमसागर जी महाराज
संपादन	:	ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी, सपना दीदी
संयोजन	:	सोनू, किरण, आरती दीदी, उमा दीदी
सम्पर्क सूत्र	:	9829127533
प्राप्ति स्थल	:	1. जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा, 2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट मनिहारों का रास्ता, जयपुर फोन : 0141-2319907 (घर) मो. : 9414812008 2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार ए-107, बुध विहार, अलवर, मो. : 9414016566 3. विशद साहित्य केन्द्र C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी रेवाड़ी (हरियाणा), मो. : 9812502062 4. विशद साहित्य केन्द्र हरीश जैन, जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561 नेहरू गली नियर लाल बत्ती चौक, गांधी नगर, दिल्ली मो. 09818115971, 09136248971
मूल्य	:	25/- रु. मात्र

: अर्थ सौजन्य :

श्रीमती शैला जैन

श्रीमती सीमा-विकास जैन

नमन मेडिकोज, शास्त्री नगर, दिल्ली

बी-1425, शास्त्री नगर, दिल्ली

मुद्रकः पारस प्रकाशन, दिल्ली फोन नं. : 9811374961, 9818394651

''श्री अनन्तनाथ की भक्ति कर करे अनन्त संसार का अंत''

अनन्त गुण सम्पन्नमनन्तज्ञानसागरम्।
अनन्तसुखभोक्तारमन्तजिमाश्रये।।

प.पू. गुरुवर आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज ने अनन्त गुणों के स्वामी, अनंत ज्ञान के सागर और अनंत सुख को भोगने वाले चौदह गुण स्थानों को क्रम-क्रम से पार कर सिद्धालय पहुँचने वाले ऐसे चौदहवें तीर्थंकर श्री अनंतनाथ की भक्ति में तन्मय होकर **श्री अनंतनाथ महामण्डल विधान** की रचना की है।

संसार से घबराये, परिवार की झंझटों से क्लेशित, समाज के थपेड़ों से दुखित आधि-व्याधियों से पीड़ित मनुष्य के लिए यह पूजन-विधान भाव सहित क्रिया-विधि से करने पर विशेष लाभकारी है।

शुद्ध भावना से विधान करने से संसार ताप शान्त हो जाता है। दुखी प्राणी को अपूर्व उल्लास प्राप्त होता है। अशुभ विचारों का नाश हो जाता हैं। भववर्द्धिनी भावना भव नाशिनी हो जाती है। परिणाम निर्मल ज्ञान उज्ज्वल, बुद्धि स्थिर मष्तिष्क शान्त और मन पवित्र हो जाता है।

पंचकल्याणक की तिथियों पर या विशेष अवसरों पर त्यागीवृत्ति विधानाचार्य जी के निर्देशन में संगीत की मधुर धुनों में समाज के सहयोग से भव्य माण्डले की रचना कर यह विधान उत्साहपूर्वक सम्पन्न करे माण्डले की रचना नहीं करनी हो तो आप सामान्य स्तर पर थाली में भी अष्ट द्रव्य से यह विधान सम्पन्न कर सकते हैं।

प.पू. साहित्य रत्नाकर **आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज** के स्वर्ण जयन्ती वर्ष के उपलक्ष में 50 प्रकार के विधानों का प्रकाशन किया जा रहा है उन्हीं में से एक यह विधान भी हैं। आचार्य श्री की लेखनी से 80 विधान लिखे जा चुके हैं आगे भी आपकी लेखनी और भी विशाल रूप लेते हुए जिनवाणी के प्रचार-प्रसार में लगी रही रहे और आप भी केवलज्ञान लक्ष्मी को प्राप्त कर मोक्ष मार्ग प्रशस्त करे इसी भावना के साथ श्री चरणों में बारम्बार नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।

मुनि विशाल सागर

जैन मन्दिर, शान्ति मोहल्ला, गांधीनगर दिल्ली

मेरी भावना

श्री लीलायतनं मही-कुल-गृहं कीर्ति-प्रमोदास्पदं,
वाग्देवी-रति-केतनं जय-रमा-क्रीडा-निधानं महत्।
स स्यात् सर्व-महोत्सवैक भवनं यः प्रार्थितार्थ-प्रदं,
प्रातः पश्यति कल्प-पादप-दलच्छायं जिनाङ्घ्रि-द्वयम्॥

यह संसार दुखों से भरा हुआ है इस संसार में कई व्यक्ति सुखी और दुखी देखे जाते हैं इसलिए हमें दुखों से छूटने के लिए भगवान की भक्ति करनी चाहिए आचार्य श्री अब तक 80 के करीब विधान लिख चुके हैं जिससे हम उन विधानों को करके अर्थात् हम भगवान की भक्ति करके लाभ प्राप्त कर सकें। इसी श्रृंखला में **आचार्य श्री विशद सागर जी महाराज** ने अपनी लेखनी से **श्री अनन्तनाथ विधान** की रचना की है।

ध्यान चिन्तवन मनन में जो, बिता रहे अपना जीवन।
ऐसे गुरुवर विशद सिन्धु को, मेरा बारम्बार नमन॥

तृतीय परमेष्ठी पद के धारी **आचार्य गुरुवर 108 श्री विशद सागर जी महाराज** मेरे अन्धेरे जीवन में ज्योति जगाने वाले, मेरे जीवन को सजाने वाले, अनेक विधानों के कर्त्ता, कवि हृदय, ओजस्वी वाणी, मुक्तक, कहानियों के रचयिता अनेक विधानों को करवाने वाले परम चारित्र साधक हैं चारित्र के बारे में कहा है

अनन्त सुखसम्पन्नाय, येनात्मायक्षणादपि।
नमस्तस्यै पवित्राय, चारित्राय पुनः पुनः॥

उस चारित्र को नमस्कार हो जिसके धारण करने से आत्मा क्षण मात्र में अनन्त सुख की धारी बन जाती है ऐसे चारित्र साधक मोक्षमार्ग के राही **प. पूज्य आचार्य गुरुवर 108 क्षमामूर्ति साहित्य रत्नाकर विशद सागर जी महाराज** के चरणों में कोटि-कोटि नमन।

ब्र. किरण दीदी
संघस्थ आचार्य विशद सागर जी महाराज

मूलनायक सहित समुच्चय पूजन

(स्थापना)

तीर्थंकर कल्याणक धारी, तथा देव नव कहे महान्।
देव-शास्त्र गुरु हैं उपकारी, करने वाले जग कल्याण॥
मुक्ती पाँए जहाँ जिनेश्वर, पावन तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
विद्यमान तीर्थंकर आदि, पूज्य हुए जो जगत प्रधान॥
मोक्ष मार्ग दिखलाने वाला, पावन वीतराग विज्ञान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, करते भाव सहित आह्वान॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक ... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञान! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

जल पिया अनादी से हमने, पर प्यास बुझा न पाए हैं।
हे नाथ! आपके चरण शरण, अब नीर चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल रही कषायों की अग्नि, हम उससे सतत सताए हैं।
अब नील गिरि का चंदन ले, संताप नशाने आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण शाश्वत मम अक्षय अखण्ड, वह गुण प्रगटाने आए हैं।
निज शक्ति प्रकट करने अक्षत, यह आज चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों से सुरभी पाने का, असफल प्रयास करते आए।
अब निज अनुभूति हेतु प्रभु, यह सुरभित पुष्प यहाँ लाए॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण हैं व्यंजन सरस श्रेष्ठ, उनकी हम सुधि बिसराए हैं।
अब क्षुधा रोग हो शांत विशद, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञाता दृष्टा स्वभाव मेरा, हम भूल उसे पछताए हैं।
पर्याय दृष्टि में अटक रहे, न निज स्वरूप प्रगटाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो गुण सिद्धों ने पाए हैं, उनकी शक्ती हम पाए हैं।
अभिव्यक्त नहीं कर पाए अतः, भवसागर में भटकाए हैं॥

जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम से भी उत्तम शुभ, शिवफल हे नाथ ना पाए हैं।
कर्मोंकृत फल शुभ अशुभ मिला, भव सिन्धु में गोते खाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद है अनर्घ मेरा अनुपम, अब तक यह जान न पाए हैं।
भटकाते भाव विभाव जहाँ, वह भाव बनाते आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा **प्रासुक करके नीर यह, देने जल की धार।**
लाए हैं हम भाव से, मिटे भ्रमण संसार॥ शान्तये शांतिधारा...

दोहा **पुष्पों से पुष्पाञ्जली, करते हैं हम आज।**
सुख-शांति सौभाग्यमय, होवे सकल समाज॥
पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

पंच कल्याणक के अर्घ्य

तीर्थंकर पद के धनी, पाएँ गर्भ कल्याण।
अर्चा करें जो भाव से, पावे निज स्थान॥1॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महिमा जन्म कल्याण की, होती अपरम्पार।
पूजा कर सुर नर मुनी, करें आत्म उद्धार।।2।।

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तप कल्याणक प्राप्त कर, करें साधना घोर।
कर्म काठ को नाशकर, बढ़ें मुक्ति की ओर।।3।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रगटाते निज ध्यान कर, जिनवर केवलज्ञान।
स्व-पर उपकारी बनें, तीर्थंकर भगवान।।4।।

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आठों कर्म विनाश कर, पाते पद निर्वाण।
भव्य जीव इस लोक में, करें विशद गुणगान।।5।।

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्त मूलनायक...सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- **तीर्थंकर नव देवता, तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।**
देव शास्त्र गुरुदेव का, करते हम गुणगान।।

(शम्भू छन्द)

गुण अनन्त हैं तीर्थंकर के, महिमा का कोई पार नहीं।
तीन लोकवर्ति जीवों में, ओर ना मिलते अन्य कहीं।।
विंशति कोड़ा-कोड़ी सागर, कल्प काल का समय कहा।
उत्सर्पण अरु अवसर्पिण यह, कल्पकाल दो रूप रहा।।1।।
रहे विभाजित छह भेदों में, यहाँ कहे जो दोनों काल।
भरतैरावत द्वय क्षेत्रों में, कालचक्र यह चले त्रिकाल।।
चौथे काल में तीर्थंकर जिन, पाते है पाँचों कल्याण।
चौबिस तीर्थंकर होते हैं जो, पाते हैं पद निर्वाण।।2।।
वृषभनाथ से महावीर तक, वर्तमान के जिन चौबीस।
जिनकी गुण महिमा जग गाए, हम भी चरण झुकाते शीश।।

अन्य क्षेत्र सब रहे अवस्थित, हों विदेह में बीस जिनेश।
एक सौ साठ भी हो सकते हैं, चतुर्थकाल यहाँ होय विशेष।।3।।
अर्हन्तों के यश का गौरव, सारा जग यह गाता है।
सिद्ध शिला पर सिद्ध प्रभु को, अपने उर से ध्याता है।।
आचार्योपाध्याय सर्व साधु हैं, शुभ रत्नत्रय के धारी।
जैनधर्म जिन चैत्य जिनालय, जिनवाणी जग उपकारी।।4।।
प्रभु जहाँ कल्याणक पाते, वह भूमि होती पावन।
वस्तु स्वभाव धर्म रत्नत्रय, कहा लोक में मनभावन।।
गुणवानों के गुण चिंतन से, गुण का होता शीघ्र विकाश।
तीन लोक में पुण्य पताका, यश का होता शीघ्र प्रकाश।।5।।
वस्तु तत्त्व जानने वाला, भेद ज्ञान प्रगटाता है।
द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, शुभ वैराग्य जगाता है।।
यह संसार असार बताया, इसमें कुछ भी नित्य नहीं।
शाश्वत सुख को जग में खोजा, किन्तु पाया नहीं कहीं।।6।।
पुण्य पाप का खेल निराला, जो सुख-दुःख का दाता है।
और किसी की बात कहें क्या, तन न साथ निभाता है।।
गुप्ति समिति धर्मादि का, पाना अतिशय कठिन रहा।
संवर और निर्जरा करना, जग में दुर्लभ काम कहा।।7।।
सम्यक् श्रद्धा पाना दुर्लभ, दुर्लभ होता सम्यक् ज्ञान।
संयम धारण करना दुर्लभ, दुर्लभ होता करना ध्यान।।
तीर्थंकर पद पाना दुर्लभ, तीन लोक में रहा महान्।
विशद भाव से नाम आपका, करते हैं हम नित गुणगान।।8।।
शरणागत के सखा आप हो, हरने वाले उनके पाप।
जो भी ध्याये भक्ति भाव से, मिट जाए भव का संताप।।
इस जग के दुःख हरने वाले, भक्तों के तुम हो भगवान।
जब तक जीवन रहे हमारा, करते रहें आपका ध्यान।।9।।

दोहा **नेता मुक्ती मार्ग के, तीन लोक के नाथ।**
शिवपद पाने आये हम, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घपदप्राप्त्ये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा **हृदय विराजो आन के, मूलनायक भगवान।**
मुक्ति पाने के लिए, करते हम गुणगान।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

श्री अनन्तनाथ स्तवन

दोहा **त्रिभुवन में जो पूज्य हैं, त्रिभुवन पति जगदीश।**
तीन योग से चरण में, झुका रहे हैं हम शीश॥

(शम्भू छन्द)

अखिल विश्व के द्रव्य चराचर, ज्ञान में जिनके भाषित हैं।
निजगुण अरु पर्यायों में जो, नित्य निरन्तर शासित हैं।
सहज शुद्ध स्वरूप आपने, सहजभाव से पाया है
अक्षय सादि अनन्त अलौकिक, अनुपमधाम बनाया है॥

हरीषेण जयश्यामा माँ के गृह, नगर अयोध्या जन्म लिए।
गिरि सम्मेद शिखर से मुक्ती, अनन्तनाथ जी प्राप्त किए।
तीर्थंकर पद पाने वाले, जगत विभु कहलाते नाथ।
पद पंकज में विशद भाव से, झुका रहे हम अपना माथ॥

साढ़े पाँच योजन का सुन्दर, अनन्त नाथ का समवशरण।
तप्त स्वर्ण सम आभा तन की, छियालिस मूलगुण किए वरण॥
गंध कुटी में दिव्य कमल पर, सिंहासन है अतिशयकार।
जिस पर श्री जिन अधर विराजे, दर्शन देते मंगलकार॥

आयू तीस लाख वर्षों की, अनन्तनाथ की रही महान।
धनुष पचास रही ऊँचाई, सेही प्रभू की है पहचान॥
ॐकार मय दिव्य ध्वनि है, प्रभू की जग में मंगलकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते बारम्बार॥

श्री अनन्त जिनवर के गणधर, आगम में बतलाए पचास।
'अरिष्टादि' कई अन्य मुनीश्वर, के पद में हो मेरा वास॥
दुखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार॥

(दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत)

श्री अनन्तनाथ पूजा

(स्थापना)

तीर्थंकर पद के धारी हैं, गुण अनन्त जिनने पाए।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य चतुष्टय, जिनने पावन प्रगटाए॥
श्री अनन्त जिन तीर्थंकर का, करते हम उर में आह्वान।
तीन योग से वन्दन करके, करते हम अतिशय गुणगान॥

दोहा **ज्ञान शरीरी हो गये, स्वयं सिद्ध भगवान।**
गुण अनन्त के कोष तुम, करते हम गुणगान॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

द्रव्य नित्य रहता अविनाशी, बनती मिटती पर्यायें।
भेद ज्ञान बिन जीव भटकते, जन्म धरें मृत्यू पायें॥
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन जैसा लगे हृदय में, यदि निज में उपयोग रहे।
भवाताप का नाश होय उर, ज्ञान की सरिता श्रेष्ठ बहे॥
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

नाशवान द्रव्यों के पीछे, अक्षय श्रद्धा को खोया।
नश्वर विषयों की आशा में, बीज कर्म का ही बोया॥
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

विषय भोग के दावानल में आत्म ब्रह्म गुण नाश किया।
धन्य अखण्ड ब्रह्म व्रतधारी, निज स्वरूप में वास किया।।
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

मोह वशी हो जड़ पदार्थ का, भोग अनन्तों बार किया।
क्षुधा शांत ना हुई कर्म का, भार स्वयं के माथ लिया।।
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

मोह पतंगे नाश हेतु प्रभु, ज्ञान दीप प्रजलाते हैं।
शिव पथ के राही बनने को, नाथ शरण हम आते हैं।।
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

रहा पाप का उदय हमारा, पर द्रव्यों को अपनाया।
माया जाल विशद कर्मों का, नहीं समझ हमने पाया।।
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्व. स्वाहा।

काल अनादी कर्म फलों का, वेदन हम करते आये।
आज प्रबल पुण्योदय आया, तव पद श्रद्धा फल लाए।।
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्व. स्वाहा।

भोगों की अभिलाषा जागी, अर्घ्य अनेक चढ़ाए हैं।
पद अनर्घ्य पाने हे भगवन!, द्वार आपके आए हैं।।
अनन्तनाथ के चरण कमल की, पूजा यहाँ रचाते हैं।
हम भी शिव पद पा जाएँ यह, विशद भावना भाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा **जिनानन्त के पद युगल, देते शांती धार।**
मोक्ष मार्ग में हे प्रभू, बनो आप आधार।। शान्तये शान्तिधारा।।

दोहा **विशद ज्ञान पाके प्रभू, पाए परमानन्द।**
पुष्पांजलि करते यहां कर्मास्रव हो बन्द।। पुष्पाजंलि क्षिपेत

पंच कल्याणक के अर्घ्य

(दोहा)

अनंतनाथ भगवान का, हुआ गर्भ कल्याण।
एकम् कार्तिक कृष्ण की, जयश्यामा उर आन।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य यह, चढ़ा रहे हम नाथ।
भक्ती का फल प्राप्त हो, चरण झुकाते माथ।।1।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णा प्रतिपदायां गर्भकल्याणक प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्येष्ठ कृष्ण की द्वादशी, सिंहसेन दरबार।
जन्मे प्रभू अनंत जिन, हुआ मंगलाचार।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य यह, चढ़ा रहे हम नाथ।
भक्ती का फल प्राप्त हो, चरण झुकाते माथ।।2।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णा द्वादश्यां जन्मकल्याणक प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(रोला छन्द)

बारस बदि ज्येष्ठ महान्, हुए प्रभु अविकारी।
श्री अनंतनाथ भगवान, बने थे अनगारी।।
हम चरणों आए नाथ, अर्घ्य चढ़ाते हैं।
महिमा तव अपरम्पार, फिर भी गाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णा द्वादश्यां दीक्षाकल्याणक प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(छन्द चामर)

चैत कृष्ण की अमावस, प्राप्त किए मंगलम्।
श्री जिनेन्द्र अनंतनाथ, ज्ञान रूप मंगलम्।।
कर्म चार नाश आप, ज्ञान पाए मंगलम्।
दिव्यध्वनि आप दिए, सौख्यकार मंगलम्।।4।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाऽमावस्यायां केवलज्ञानकल्याणक प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

श्री अनंत जिन चैत अमावस, मोक्ष कई मुनियों के साथ।
गिरि सम्मेद शिखर से भगवन्, बने आप शिवपुर के नाथ॥
अष्ट गुणों की सिद्धी पाकर, बने प्रभू अंतर्यामी।
हमको मुक्ती पथ दर्शाओ, बनो प्रभु मम् पथगामी॥5॥

ॐ ह्रीं चैत कृष्णाऽमावस्यायां मोक्षकल्याणक प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा **चिन्मय चिंतामणि प्रभू, गुण अनन्त की खान।**
गाते हम जय मालिका, हे अनन्त! भगवान॥

(छन्द चामर)

दर्श करके आपका, यह कमाल हो गया।
अर्च के पादारिवन्द, मैं निहाल हो गया॥
धन्य यह घड़ी हुई व, धन्य जन्म हो गया।
धन्य नेत्र हो गये प्रभु, धन्य शीश हो गया॥
पूज्य नाथ आप हैं, मैं पुजारी हो गया।
देशना से आपकी, मोह दूर हो गया॥
मोह व मिथ्यात्व नाथ, आज मेरा खो गया॥
आत्मा अनन्त है, अनन्त दीप्तिमान है।
गुण अनन्त की निधान, आत्म कीर्तिमान है॥
दर्शज्ञान वीर्य शुभ, अनन्त सौख्यवान है।
निर्विकार चेतना स्वरूप, की निधान है॥
आत्मज्ञान ध्यान से, सर्व कर्म नाश हो।
एक आत्म ज्ञान से, राग का विनाश हो॥
आत्म ज्ञान हीन जीव, लोक में भ्रमाएगा।
साम्यभाव हीन कभी, मोक्ष नहीं पाएगा॥
मोक्ष धाम दे यही, अन्य से न पाएगा।
स्वात्म ज्ञान ध्यान हीन, ठोकरें ही खाएगा॥
सौख्य दुख जन्म मृत्यु, शत्रु कोई मित्र हो।

लाभ या अलाभ में भी, साम्यता पवित्र हो॥
साम्य भाव प्राप्त हो, न राग न विकार हो।
कोई भी उपसर्ग हो, शत्रु का प्रहार हो॥
नाथ आप पादमूल, एक ही है चाहना।
मोक्ष मार्ग प्राप्त हो बस, और कोई चाह ना॥
कर रहे हैं आपसे हम, नाथ यही प्रार्थना।
अष्ट द्रव्य साथ ले प्रभु, कर रहे हम अर्चना॥
बार-बार हाथ जोड़, कर रहे हम वन्दना।
अष्ट कर्म का प्रभु अब, होय कभी बन्ध ना॥

दोहा- **ब्रह्मा तुम विष्णु तुम्हीं, नारायण तुम राम।**
तुम ही शिव जिनवर-तुम्हीं, चरणों 'विशद' प्रणाम॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलय:

दोहा- **छह द्रव्यों में जो करें, भाव सहित श्रद्धान।**
अनुक्रम से वह जीव सब, पावें केवल ज्ञान॥

(प्रथम वलयोपरि परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

स्थापना

तीर्थंकर पद के धारी हैं, गुण अनन्त जिनने पाए।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य चतुष्टय, जिनने पावन प्रगटाए॥
श्री अनन्त जिन तीर्थंकर का, करते हम उर में आह्वान।
तीन योग से वन्दन करके, करते हम अतिशय गुणगान॥

दोहा **ज्ञान शरीरी हो गये, स्वयं सिद्ध भगवान।**
गुण अनन्त के कोष तुम, करते हम गुणगान॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्त नाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री अनन्त नाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अनन्त नाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

छह द्रव्यों के अर्घ्य

(जोगीरासा छन्द)

है उपयोग 'जीव' का लक्षण, ऐसी श्रद्धा धारी।
सम्यक् दृष्टी जीव कहाए, अतिशय मंगलकारी।।
ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।1।।

ॐ ह्रीं जीव द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

'पुद्गल द्रव्य' कहा है मूर्तिक, दश पर्यायों वाला।
जो सम्यक् श्रद्धान जगाए, है वह जीव निराला।।
ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।2।।

ॐ ह्रीं पुद्गल द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जीव और पुद्गल द्रव्यों को, होवे चलन सहाई।
'धर्म द्रव्य' होता अमूर्त यह, श्रद्धा धारो भाई।।
ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।3।।

ॐ ह्रीं धर्म द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जीव और पुद्गल द्रव्यों को रुकने हेतु सहाई।
'द्रव्य अधर्म' अचेतन गाया, यह श्रद्धा हो भाई।।
ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।4।।

ॐ ह्रीं अधर्म द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अवगाहन देता द्रव्यों को, वह 'आकाश' बताया।
ऐसी श्रद्धा धारी जिसने, उसने शिव पद पाया।।
ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।5।।

ॐ ह्रीं आकाश द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

'काल द्रव्य' परिणमन, हेतु है, द्रव्यों का सहयोगी।
ऐसी श्रद्धा धारण करके, ज्ञानी बनते योगी।।

ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।6।।

ॐ ह्रीं काल द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

छह द्रव्यों के साथ तत्त्व के, जो स्वरूप का ज्ञाता।
अल्प समय में रत्नत्रय पा, वह शिव पद को पाता।।
ज्ञानाचरण को पाने वाला, केवल ज्ञान जगाए।
अर्चा करने वाला जिन की, अर्हत् पदवी पाए।।7।।

ॐ ह्रीं षड् द्रव्य ज्ञायक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

द्वितिय वलयः

दोहा **भाकर बारह भावना, पाते हैं वैराग्य।**
वन्दन कर जिनराज पद, जगें भव्य के भाग्य।।

(द्वितिय वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत)

(स्थापना)

तीर्थंकर पद के धारी हैं, गुण अनन्त जिनने पाए।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य चतुष्टय, जिनने पावन प्रगटाए।।
श्री अनन्त जिन तीर्थंकर का, करते हम उर में आह्वान।
तीन योग से वन्दन करके, करते हम अतिशय गुणगान।।

दोहा **ज्ञान शरीरी हो गये, स्वयं सिद्ध भगवान।**
गुण अनन्त के कोष तुम, करते हम गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्त नाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्रीं श्री अनन्त नाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री अनन्त नाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

बारह भावना के अर्घ्य

(विष्णुपद छन्द)

धन परिजन गृह सम्पदादि सब, 'अध्रुव' कहलाए।
मोही प्राणी इनको, पाकर अति हर्षाए।।

ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।1।।

ॐ ह्रीं अनित्य भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मात पिता सुत दारा भाई, 'शरण नहीं' कोई।
ज्ञानी जीव करे नित चिन्तन, इस प्रकार सोई।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।2।।

ॐ ह्रीं अशरण भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

यह 'संसार' असार बताया, इसमें सार नहीं।
चार गति में जाकर देखा, सुख ना मिला कहीं।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।3।।

ॐ ह्रीं संसार भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जन्मे मरे अकेला प्राणी, ऋषियों ने गाया।
फिर भी पर को अपना माने, रही मोह माया।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।4।।

ॐ ह्रीं एकत्व भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

देहादिक सब अन्य जीव से, सत्य यही गाया।
फिर भी पर में राग लगाए, मोह की ये माया।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।5।।

ॐ ह्रीं अन्यत्व भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मल से बनी देह यह मैली, नव मल द्वार बहे।
कर्मोदय से प्राणी मोहित, अपना इसे कहे।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।6।।

ॐ ह्रीं अशुचि भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मोहादिक के कारण प्राणी, आस्रव नित्य करें।
उसी कर्म के फल भव-भव में, अतिशय दुःख भरें।।

ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।7।।

ॐ ह्रीं आश्रव भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गुप्ति समिति व्रत पाने वाले, के संवर होवे।
लगे पूर्व के कर्म जीव के, अपने वह खोवे।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।8।।

ॐ ह्रीं संवर भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कर्म निर्जरा तप के द्वारा, होती है भाई।
अनुक्रम से शिव पद में कारण, होवे सुखदायी।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।9।।

ॐ ह्रीं निर्जरा भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

ऊर्ध्व अधो अरु मध्य लोक यह, पुरुषाकार कहा।
कर्मोदय से प्राणी इसमें, भ्रमता सदा रहा।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।10।।

ॐ ह्रीं लोक भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मिथ्या अविरति योग कषाएँ, प्राणी सब पावें।
बोधी दुर्लभ रही लोक में, जो ना प्रगटावें।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।11।।

ॐ ह्रीं बोधिदुर्लभ भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भव दुख से छुटकारा देने, वाला धर्म कहा।
जिसको पाना विशद हमारा, अन्तिम लक्ष्य रहा।।
ऐसा चिन्तन करने वाले, निज को ही ध्याते।
होकर के अविकारी जग से, शिव पदवी पाते।।12।।

ॐ ह्रीं धर्म भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा- **भावें बारह भावना, तीर्थंकर भगवान।**
संयम के पथ पर बढ़ें, पावें केवलज्ञान।।

ॐ ह्रीं द्वादश भावना प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तृतीय वलयः

दोहा **चौबिस परिगृह से रहित, होते जिन अर्हन्त।**
विशद ज्ञान पाके बनें, मुक्ति वधु के कंत॥

(तृतीय वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(स्थापना)

तीर्थंकर पद के धारी हैं, गुण अनन्त जिनने पाए।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य चतुष्टय, जिनने पावन प्रगटाए॥
श्री अनन्त जिन तीर्थंकर का, करते हम उर में आह्वान।
तीन योग से वन्दन करके, करते हम अतिशय गुणगान॥

दोहा **ज्ञान शरीरी हो गये, स्वयं सिद्ध भगवान।**
गुण अनन्त के कोष तुम, करते हम गुणगान॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौबीस परिग्रह रहित जिन के अर्घ्य

(चौपाई)

जो 'मिथ्या' भाव जगावें, वे सत् श्रद्धा न पावें।
जो हैं मिथ्या के नाशी, होते वे शिवपुर वासी॥1॥

ॐ ह्रीं मिथ्या परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हैं 'क्रोध कषाय' के धारी, वह दुख पाते हैं भारी।
जो हैं कषाय जयकारी, इस जग में मंगलकारी॥2॥

ॐ ह्रीं क्रोध कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जो 'मान' करें जग प्राणी, वह स्वयं उठाते हानी।
हैं मान कषाय के नाशी, वह होते शिवपुर वासी॥3॥

ॐ ह्रीं मान परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जो करते 'मायाचारी', दुख सहते वह नर नारी।
जो नाशें मायाचारी, वे होते शिवपद धारी॥4॥

ॐ ह्रीं माया परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जग के सब 'लोभी' प्राणी, मानो पापों की खानी।
हैं लोभ कषाय विनाशी वे होते शिवपुरी वासी॥5॥

ॐ ह्रीं लोभ परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(तांटक छन्द)

'हास्य' कषाय करें जो प्राणी, वह दुःखों को पाते हैं।
शंकित होते हैं औरों से, निज संसार बढ़ाते हैं॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं॥6॥

ॐ ह्रीं हास्य नो कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

'रति' उदय में जिनके आवे, वे सब राग बढ़ाते हैं।
राग आग में जलकर प्राणी, दुर्गति पंथ सजाते हैं॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं॥7॥

ॐ ह्रीं रति नो कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

'अरति' भाव मन में आने से, अप्रीति का भाव जगे।
बैर भाव के कारण मानव, कर्माश्रव में शीघ्र लगे॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं॥8॥

ॐ ह्रीं अरति नो कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

कुछ भी इष्टानिष्ट देखकर, मन में 'शोक' जगाते हैं।
नित कषाय में जलने वाले, कर्म बन्ध ही पाते हैं॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं॥9॥

ॐ ह्रीं शोक नो कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

देख कोई भयकारी वस्तू, मन में भय उपजाते हैं।
भय के कारण व्याकुल होकर, शांत नहीं रह पाते हैं॥

इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं।।10।।

ॐ ह्रीं भय नो कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

स्व-पर के गुण दोष देखकर, जो ग्लानी उपजाते हैं।
रहे कषाय 'जुगुप्सा' धारी, दुर्गति में ही जाते हैं।।
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं।।11।।

ॐ ह्रीं जुगुप्सा नो कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

पुरुष जन्य जो भाव प्राप्त कर, रमने को खोजें नारी।
'पुरुष वेद' के धारी हैं वह, व्याकुल रहते हैं भारी।।
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं।12।।

ॐ ह्रीं पुरुष वेद कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

स्त्री जन्य भाव पाकर के, पुरुषों में जो रमण करे।
'स्त्री वेद' प्राप्त करके वह, दुर्गति में ही गमन करे।।
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं।।13।।

ॐ ह्रीं स्त्री वेद कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

मन में नर नारी की आशा, रखते हैं वह 'षण्ड' कहे।
करते हैं उत्पात विषय गत, भारी जो उद्दण्ड रहे।।
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं।।14।।

ॐ ह्रीं नपुंसक वेद कषाय परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(छन्द भुजंगप्रयात)

खेती के मन में जो भाव जगाए,
'क्षेत्र परिग्रह' के धारी कहाए।

बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।15।।

ॐ ह्रीं क्षेत्र परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कोठी महल बंगला जो बनावें,
'वास्तु परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।16।।

ॐ ह्रीं वास्तु परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चाँदी की मन में जो आशा जगावें,
'परिग्रह हिरण्य' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।17।।

ॐ ह्रीं हिरण्य परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सोने के आभूषण आदी मंगावें,
'परिग्रह जो स्वर्ण' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।18।।

ॐ ह्रीं स्वर्ण परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पशुओं के पालन में मन को लगावें,
वह 'धन परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।19।।

ॐ ह्रीं धन परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

लेकर के धान्य जो कोठे भरावें,
वह 'धान्य परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।20।।

ॐ ह्रीं धान्य परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सेवा के हेतू जो नौकर बुलावें
वह 'दास परिग्रह' के धारी कहावें।

बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।21।।

ॐ ह्रीं दास परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

स्त्री से अपनी जो सेवा करावें,
वे 'दासी परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।22।।

ॐ ह्रीं दासी परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कपड़े जो नये-नये लेकर कई आवें,
वे 'कुप्य परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।23।।

ॐ ह्रीं कुप्य परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भांड़े या बर्तन से कोठे भरावें,
वह 'भाण्ड परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई,
जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई।।24।।

ॐ ह्रीं भाण्ड परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

बहिरंग परिग्रह के दश भेद गाए,
अभ्यन्तर के भेद चौदह बताए।
चौबिस परिग्रह के त्यागी जो भाई,
मुक्ति श्री उनके जीवन में पाई।।25।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति परिग्रह रहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

चतुर्थ वलयः

दोहा- **बारह अविरति से रहित, दोष अठारह हीन।**
समवशरण जिन शोभते, निज स्वभाव में लीन।।

(चतुर्थ वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(स्थापना)

तीर्थंकर पद के धारी हैं, गुण अनन्त जिनने पाए।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य चतुष्टय, जिनने पावन प्रगटाए।।

श्री अनन्त जिन तीर्थंकर का, करते हम उर में आह्वान।
तीन योग से वन्दन करके, करते हम अतिशय गुणगान।।

दोहा **ज्ञान शरीरी हो गये, स्वयं सिद्ध भगवान।**
गुण अनन्त के कोष तुम, करते हम गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

बारह अविरति रहित जिन

(चौपाई)

पृथ्वी कायिक होते जीव, सहते हैं जो दुःख अतीव।
दया हीन नित करते बन्ध, अविरत त्याग बनें अर्हंत।।1।।

ॐ ह्रीं पृथ्वी कायिक अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

जल कायिक हैं जल के जीव, कर्म बन्ध जो करें अतीव।
दया हीन नित करते बन्ध, अविरत त्याग बनें अर्हंत।।2।।

ॐ ह्रीं जल कायिक अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

अग्नी कायिक हैं जो जीव, वह सहते हैं कष्ट अतीव।
दया हीन नित करते बन्ध, अविरत त्याग बनें अर्हंत।।3।।

ॐ ह्रीं अग्नि कायिक अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

वायु कायिक जीव प्रधान, जिनको नहीं हैं निज का भान।
दयाहीन नित करते बन्ध, अविरत त्याग बनें अर्हंत।।4।।

ॐ ह्रीं वायु कायिक अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

वनस्पति कायिक के जीव, जन्म मरण जो करें अतीव।
दया हीन नित करते बन्ध, अविरत त्याग बनें अर्हंत।।5।।

ॐ ह्रीं वनस्पति कायिक अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

दो इन्द्रिय आदिक त्रस जीव, सारे जग में भरे अतीव।
दयाहीन नित करते बन्ध, अविरत त्याग बनें अर्हंत।।6।।

ॐ ह्रीं त्रस जीवाविरति कायिक अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

स्पर्शन इन्द्रिय के धारी, रहते हैं जो सदा विकारी।
भव सिन्धू में दु:ख उठाते, तज विकार अर्हत् बन जाते।।7।।

ॐ ह्रीं स्पर्शन इन्द्रियाविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

रसना इन्द्रिय रही निराली, जग के विषय बढ़ाने वाली।
भव सिन्धू में दु:ख उठाते, तज विकार अर्हत् बन जाते।।8।।

ॐ ह्रीं रसना इन्द्रियाविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

घ्राणेन्द्रिय के विषयी प्राणी, राग द्वेष करते या ग्लानी।
भव सिन्धू मे दु:ख उठाते, तज विकार अर्हत् बन जाते।।9।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियाविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

चक्षू इन्द्रिय सदा लुभाए, भव में राग द्वेष उपजाए।
भव सिन्धू में दु:ख उठाते, तज विकार अर्हत् बन जाते।।10।।

ॐ ह्रीं चक्षु इन्द्रिय अविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

कर्णेन्द्रिय के विषय निराले, सुनकर मोह बढ़ाने वाले।
भव सिन्धू में दु:ख उठाते, तज विकार अर्हत् बन जाते।।11।।

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रियाविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

मन मर्कट है बहु दुखदायी, मुश्किल वश में करना भाई।
भव सिन्धू में दु:ख उठाते, तज विकार अर्हत् बन जाते।।12।।

ॐ ह्रीं अनिन्द्रयाविरति विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

''अष्टादश दोष रहित जिनेन्द्र''

(सखी छन्द)

जो 'क्षुधा' दोष के धारी, वह जग में रहे दुखारी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।13।।

ॐ ह्रीं क्षुधा रोग विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'तृषा' दोष को पाते, वह अतिशय दु:ख उठाते।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।14।।

ॐ ह्रीं तृषा दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'जन्म' दोष को पावें, वह मरकर फिर उपजावें।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।15।।

ॐ ह्रीं जन्मदोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है 'जरा' दोष भयकारी, दुख देता है जो भारी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।16।।

ॐ ह्रीं जरा दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'विस्मय' करने वाले, प्राणी हैं दुखी निराले।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।17।।

ॐ ह्रीं विस्मय दोष विनाशक श्री अनन्तननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है 'अरति' दोष जग जाना, दुखकारी इसको माना।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।18।।

ॐ ह्रीं अरति दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्रम करके जग के प्राणी, बहु 'खेद' करें अज्ञानी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।19।।

ॐ ह्रीं खेद दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है 'रोग' दोष दुखदायी, सब कष्ट सहें कई भाई।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।20।।

ॐ ह्रीं रोग दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जब इष्ट वियोग हो जाए, तब 'शोक' हृदय में आए।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।21।।

ॐ ह्रीं शोक दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'मद' में आकर के प्राणी, करते हैं पर की हानी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।22।।

ॐ ह्रीं मददोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'मोह' दोष के नाशी, होते है शिवपुर वासी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।23।।

ॐ ह्रीं मोह दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'भय' सात कहे दुखकारी, जिनकी महिमा है न्यारी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।24।।

ॐ ह्रीं भय दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'निद्रा' से होय प्रमादी, करते निज की बरबादी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।25।।

ॐ ह्रीं निद्रा दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'चिंता' को चिता बताया, उससे ही जीव सताया।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।26।।

ॐ ह्रीं चिंता दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तन से जब 'स्वेद' बहाए, जो भारी दुख पहुँचाए।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।27।।

ॐ ह्रीं स्वेद दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है 'राग' आग सम भाई, जानो इसकी प्रभुताई।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।28।।

ॐ ह्रीं राग दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जिसके मन 'द्वेष' समाए, वह कमठ रूप हो जाए।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।29।।

ॐ ह्रीं 'द्वेष' दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

हैं मरण दोष के नाशी, वे होते शिवपुर वासी।
यह दोष विनाशन हारी, तीर्थंकर हैं अविकारी।।30।।

ॐ ह्रीं 'मृत्यु' दोष विनाशक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समवशरण के अष्टादश अर्घ

(सखी छन्द)

प्रभु केवलज्ञान जगाते, सुर समवशरण बनवाते।
हैं मानस्तंभ निराले, जो मान गलाने वाले।।
हम पूरव के शुभकारी, यहाँ पूज रहे मनहारी।
यह पावन अर्घ्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते।।31।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित पूर्व दिशा मानस्तम्भ सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीर्थंकर केवलज्ञानी, की वाणी है कल्याणी।
हैं मानस्तभ निराले, शुभ अतिशय महिमा वाले।।
हम दक्षिण के शुभकारी, यहाँ पूज रहे मनहारी।
यह पावन अर्घ्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते।।32।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित दक्षिण दिशा मानस्तम्भ सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्हत की महिमा न्यारी, इस जग में मंगलकारी।
शुभ मानस्तंभ निराले, हैं मान गलाने वाले।।
हम पश्चिम के शुभकारी, यहाँ पूज रहे मनहारी।
यह पावन अर्घ्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते।।33।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित पश्चिम दिशा मानस्तम्भ सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रभु समवशरण में सोहें, जन-जन के मन को मोहें।
सुर मानस्तंभ बनावें, जिनके सब दर्शन पावें।
हम उत्तर के शुभकारी, यहाँ पूज रहे मनहारी।
यह पावन अर्घ्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते।।34।।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित उत्तर दिशा मानस्तम्भ सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(नरेन्द्र छन्द)

चैत्य प्रसाद भूमि है पहली, दुख दरिद्र की नाशी।
श्री जिनेन्द्र की अर्चा करके, प्राणी हों शिव वासी॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥35॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित चैत्य प्रासाद भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भूमि खातिका है मनहारी, शांति प्रदायक भाई।
देवों द्वारा निर्मित होती, भविजन को सुखदायी॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥36॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित खातिका भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

लता भूमि तृतिय कहलाई, पुष्प लताओं वाली।
शोभा वरणी जाय ना जिसकी, देखत लगे निराली॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥37॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित लता भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उपवन भूमि में तरुवर की, शोभा अतिशयकारी।
जिन बिम्बों से युक्त जिनालय, सोहें मंगलकारी॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥38॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित उपवन भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दश चिन्हों से युक्त ध्वजाएँ, ध्वज भूमी में सोहें।
पवन चले लहराएँ फर-फर, भविजन का मन मोहें॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥39॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित ध्वज भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमी है छठवीं, जो इच्छित फलदायी।
तरु शाखा पर सिद्ध बिम्बशुभ, पूज्य रहे हैं भाई॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥40॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित कल्पवृक्ष भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भवन भूमि सप्तम कहलाई, जिसमें देव विचरते।
जिन चरणों के भक्त भ्रमर जो, आकर क्रीड़ा करते॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥41॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित भवन भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री मंडप भूमी में द्वादश, श्रेष्ठ सभाएँ आवें।
सुर नर पशु के जीव देशना, श्री जिनेन्द्र की पावें॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥42॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री मंडप भूमि सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रथम पीठ रत्नों से मण्डित, समवशरण में भाई।
धर्म चक्र ले खड़े यक्ष शुभ, हो प्रसन्न सुखदायी॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥43॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित धर्मचक्र सहिताय श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

द्वितिय पीठ मणी मुक्ता युत, श्रेष्ठ ध्वजा लहराएँ।
नव निधि मंगल द्रव्य धूप-घट, अतिशय शोभा पाएँ॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥44॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित अष्टमंगल सहिताय श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गंध कुटी तृतिय पीठोपरि, कमलासन शुभकारी।
अधर विराजे श्री जिनवर जी, अतिशय मंगलकारी॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते॥45॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित गंध कुटि ऊपर स्थित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

श्री अनन्तजिन दीक्षा धारे, एक सहस मुनियों के साथ।
पाकर केवल ज्ञान बने प्रभु, समवशरण लक्ष्मी के नाथ॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते हैं॥46॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित एक सहस्र मुनि सहिताय श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अरिष्टसेनआदिक पंचाशत, गणधर ऋषि छियासठ हज्जार।
एक लाख अरु सहस आठ शुभ, आर्यिकाएँ जानो शुभकार॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते हैं॥47॥

ॐ ह्रीं अरिष्ट सेनादि पञ्चाशद् गणधर ऋषि एवं आर्यिका संघ संयुक्त समवशरण स्थित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्रावक रहे दो लाख चार लख, श्राविकाएँ, जिनवर के साथ।
यक्ष रहा किन्नर वैरोटी, यक्षी चरण झुकाए माथ॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं।
विशद भाव से नत होकर के, सादर शीश झुकाते हैं॥48॥

ॐ ह्रीं श्रावक श्राविका यक्ष यक्षी पूजित समवशरण स्थित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

छियालिस मूलगुणों के धारी, समवशरण के आप महीश।
गणधरादि चरणों में आके, सदा झुकावें सादर शीश॥
जिनानन्त के चरण कमल में, पावन अर्घ्य चढ़ाते हैं।
विशद भाव से पद पंकज में सादर शीश झुकाते हैं॥49॥

ॐ ह्रीं द्वादश अविरति अष्टादश दोष रहित समवशरण स्थित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचम वलयः

दोहा- **छियालिस पाए मूलगुण, जिनानन्त भगवान।**
जिनगुण पाने को यहाँ, करते हम गुणगान॥

(पंचम वलयोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत)

(स्थापना)

तीर्थंकर पद के धारी हैं, गुण अनन्त जिनने पाए।
दर्श ज्ञान सुख वीर्य चतुष्टय, जिनने पावन प्रगटाए॥
श्री अनन्त जिन तीर्थंकर का, करते हम उर में आह्वान।
तीन योग से वन्दन करके, करते हम अतिशय गुणगान॥

दोहा **ज्ञान शरीरी हो गये, स्वयं सिद्ध भगवान।**
गुण अनन्त के कोष तुम, करते हम गुणगान॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जन्म के दस अतिशय

(चौपाई)

स्वेद रहित तन पाते स्वामी, तीर्थंकर जिन अन्तर्यामी।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते॥1॥

ॐ ह्रीं स्वेद रहित सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

निर्मल सहज प्रभू तन पाते, जो मल मूत्र कभी ना जाते।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते॥2॥

ॐ ह्रीं निहार रहित सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

रुधिर स्वेत है जिनका भाई, वात्सल्य की है प्रभुताई।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते॥3॥

ॐ ह्रीं श्वेत रुधिर सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

समचतुस्र संस्थान बताया, सुन्दर जो सबके मन भाया।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।4।।

ॐ ह्रीं समचतुष्क संस्थान सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

श्रेष्ठ संहनन प्रभू जी पाए, वज्रवृषभ नाराच कहाए।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।5।।

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराच संहनन सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

मन मोहक है रूप निराला, जन जन का मन हरने वाला।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।6।।

ॐ ह्रीं अतिशय रूप सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

रहा सुगन्धित तन शुभकारी, जिसकी महिमा जग से न्यारी।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।7।।

ॐ ह्रीं सुगन्धित तन सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

सहस्र आठ शुभ लक्षण धारी, तीर्थंकर जिन मंगलकारी।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।8।।

ॐ ह्रीं सहस्राष्ट शुभ लक्षण सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

बल अनन्त के धारी जानो, जन्म का अतिशय प्रभु का मानो।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।9।।

ॐ ह्रीं अतुल्य बल सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

प्रिय हित वचन मधुर मनहारी, प्रभू बोलते विस्मय कारी।
उनके पद हम शीश झुकाते, अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते।।10।।

ॐ ह्रीं हितमित प्रिय वचन सहजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

केवलज्ञान के दस अतिशय

(सखी छन्द)

सौ योजन सुभिक्ष हो भाई, है जिनवर की प्रभुताई।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते।।11।।

ॐ ह्रीं गव्यूति शत् चतुष्ट्य सूभिक्षत्व घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

प्रभु होते गगन विहारी, इस जग में मंगलकारी।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते।।12।।

ॐ ह्रीं आकाश गमन घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

प्रभु अदया भाव नशाते, शुभ दया भाव प्रगटाते।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते।।13।।

ॐ ह्रीं अदयाभाव घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

हैं कवलहार के त्यागी, निज चेतन के अनुरागी।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते।।14।।

ॐ ह्रीं कवलाहाराभाव घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

उपसर्ग रहित जिन स्वामी, होते हैं शिवपथ गामी।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते।।15।।

ॐ ह्रीं उपसर्गाभावघातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

हो चतुर्दिशा से भाई, जिनका दर्शन सुखदायी।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते।।16।।

ॐ ह्रीं चतुर्मुखत्व घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

प्रभु विशद ज्ञान शुभ पाए, जिन विद्येश्वर कहलाए।
जब केवलज्ञान जगाते, जब यह अतिशय प्रगटाते॥17॥

ॐ ह्रीं सर्व विद्येश्वरत्व घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

प्रभु छाया रहित निराले, हैं मूर्तिमान तन वाले।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते॥18॥

ॐ ह्रीं छाया रहित घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

नहि नयनों में टिमकारी, नाशा दृष्टी है प्यारी।
जब केवलज्ञान जगाते, तब यह अतिशय प्रगटाते॥19॥

ॐ ह्रीं अक्षस्पंद रहित घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

नख केश ना वृद्धी पाते, ज्यों के त्यों रह जाते।
जब केवलज्ञान जगाते, जब यह अतिशय प्रगटाते॥20॥

ॐ ह्रीं समान नख केशत्व घातिक्षयजातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

देवोपुनीत चौदह अतिशय

(छन्द हरिगीता)

भाषा है अर्धमागध, जिनराज की निराली।
जो भव्य प्राणियों को, शिव सौख्य देने वाली॥
जिनके चरण का अर्चन, सौभाग्य को बढ़ाए।
कर्मों का नाश करके, शिव राज को दिलाए॥21॥

ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधी भाषा देवोपनीतातिशय धारक श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब प्राणियों में मैत्री का, भाव जाग जाए।
देवों के द्वारा अतिशय हो, जिन प्रभू के आए॥

जिनके चरण का अर्चन, सौभाग्य को बढ़ाए।
कर्मों का नाश करके, शिव राज को दिलाए॥22॥

ॐ ह्रीं सर्व मैत्रीभाव देवोपनीतातिशय धारक श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खिलते है फूल फल शुभ, सब ऋतु के सौख्यकारी।
आकर के देव जिन पद, अतिशय दिखाते भारी॥
जिनके चरण का अर्चन, सौभाग्य को बढ़ाए।
कर्मों का नाश करके, शिव राज को दिलाए॥23॥

ॐ ह्रीं सर्वर्तुफलादि तरु परिणाम देवोपनीतातिशय धारक श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पृथ्वी हो रत्नमय शुभ, दर्पण समान भाई।
करते है देव मारग, जीवों को सौख्यदायी॥
जिनके चरण का अर्चन, सौभाग्य को बढ़ाए।
कर्मों का नाश करके, शिव राज को दिलाए॥24॥

ॐ ह्रीं आदर्शतल प्रतिमा रत्नमसी देवोपनीतातिशय धारक श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(भुजंगप्रयात छन्द)

चले श्रेष्ठ सुरभित पवन सौख्यदायी,
प्रभू के चरण की ये महिमा बताई।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी॥25॥

ॐ ह्रीं सुगन्धित विहरण मनुगत वायुत्व देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

परम श्रेष्ठ आनन्द पाते हैं प्राणी,
ये अतिशय भी होता कहे जैनवाणी।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी॥26॥

ॐ ह्रीं सर्वानन्दकारक देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

हो भू स्वच्छ निर्मल परम सौख्यदायी,
रहे धूल कंटक जरा भी ना भाई।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।27।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारोपशमित धूलि कंटकादि देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

करें देव गंधोदक की श्रेष्ठ वृष्टी,
हो आनन्दमय सर्वदिशा सर्व सृष्टी।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।28।।

ॐ ह्रीं मेघकुमारकृत गंधोदक वृष्टि देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

चरण तल कमल देव रचते है भाई,
दिखे श्रेष्ठ अनुपम परम सौख्यदायी।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।29।।

ॐ ह्रीं चरणकमलतल रचित स्वर्ण कमल देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

रहित धूम से सोहें सारी दिशाएँ,
देवों कृत अतिशय से निर्मलता पाएँ।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।30।।

ॐ ह्रीं सर्वदिशा निर्मल देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

गगन हो शरद कालवत स्वच्छ भाई,
है महिमा प्रभू की विशद मुक्तिदायी।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।31।।

ॐ ह्रीं शरदकाल वन्निर्मल गगन देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

करे देव जय घोष आके निराले,
चारों निकायों के खुश होने वाले।

अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।32।।

ॐ ह्रीं आकाशे जय-जयकार देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

धरम चक्र यक्षेन्द्र सिर पे सम्हालें,
जो खुश होके चउदिश में आगे ही चालें।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।33।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्र चतुष्टय देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

विशद मंगलदायी हैं द्रव्य अष्ट भाई,
ध्वजा छत्र कलशादी हैं सौख्यदायी।
अतिशय ये देवोंकृत है सौख्यकारी,
प्रभू जी कहाते हैं अतिशय के धारी।।34।।

ॐ ह्रीं अष्ट मंगल द्रव्य देवोपुनीतातिशय धारक श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

अनन्त चतुष्टय

(सखी छन्द)

प्रभु ज्ञानावरण नशाते, फिर केवलज्ञान जगाते।
हम वन्दन करने आये, यह अर्घ्यं चढ़ाने लाए।।35।।

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञान गुण प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु कर्म दर्शनावरणी, नाशे हैं भव से तरणी।
हम वन्दन करने आये, यह अर्घ्यं चढ़ाने लाए।।36।।

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शन गुण प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हैं मोह कर्म के नाशी, जिन सुखानन्त प्रतिभासी।
हम वन्दन करने आये, यह अर्घ्यं चढ़ाने लाए।।37।।

ॐ ह्रीं अनन्तसुख गुण प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु अन्तराय को नाशे, बलवीर्य अनन्त प्रकाशे।
हम वन्दन करने आये, यह अर्घ्यं चढ़ाने लाए।।38।।

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्य गुण प्राप्त श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अष्ट प्रातिहार्य

(आडिल्य छन्द)

प्रातिहार्य सुर वृक्ष प्रथम जिन पाए हैं,
मरकत मणि सम जन जन के मन भाए हैं
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।39।।

ॐ ह्रीं अशोक तरु सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

पुष्प वृष्टि कर देव सभी हर्षाए हैं,
तीर्थंकर की महिमा जो दिखलाए हैं।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।40।।

ॐ ह्रीं सुर पुष्पवृष्टि सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

चौंसठ चँवर ढौरने वाले देव हैं,
तीर्थंकर प्रकृति पाते जिनदेव हैं।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।41।।

ॐ ह्रीं चतु: षष्ठि चामर सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा।

कोटि सूर्य सम भामण्डल की कांति है,
जिन चरणों में मिटती मन की भ्रांति है।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।42।।

ॐ ह्रीं भामण्डल सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा।

देव दुन्दुभी बजती मंगलकार है,
जिन महिमा का मानो यह उपहार है।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।43।।

ॐ ह्रीं देव दुन्दुभी सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वा. स्वाहा।

तीन छत्र सिर के ऊपर दिखलाए हैं,
तीन लोक के प्रभु हैं यह बतलाए हैं।

केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।44।।

ॐ ह्रीं छत्र त्रय सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि तिय कालों में खिरती अहा,
प्रातिहार्य यह भी इक जिनवर का रहा।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।45।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनि सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा।

सिंहासन पर जिन महिमा दिखलाए हैं,
प्रातिहार्य जिनवर के अनुपम गाए हैं।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।46।।

ॐ ह्रीं सिंहासन सत्प्रातिहार्य सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा।

चौंतिस अतिशय प्रातिहार्य वसु पाए हैं,
अनन्त चतुष्टय जिनानन्त प्रगटाए हैं।
केवलज्ञानी की महिमा मनहार है,
सारे जग में अतिशय जो शुभकार है।।47।।

ॐ ह्रीं षड् चत्वारिशंद् गुण सहित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

जाप्य ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐम् अर्हं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय: नम: स्वाहा।

जयमाला

दोहा- **अनन्तनाथ भगवान हैं, गुण अनन्त के कोष।**
जयमाला गाते विशद, जीवन हो निर्दोष।।

(ज्ञानोदय छन्द)

तीर्थंकर चौदहवे बनकर, इस जग का उद्धार किया।
दिव्य देशना देकर के प्रभु, नर जीवन का सार दिया।।
जीव समास मार्गणा चौदह, गुणस्थान बताए हैं।
चौदह कुलकर हुए पूर्व मे, कुल का ज्ञान कराए हैं।।1।।

तत्त्वों के श्रद्धान रहित हो, वह मिथ्यात्व कहाता है।
उपशम सम्यक् से गिरता जो, सासादन में आता है॥
गुणस्थान मिश्र है तृतिय, सम्यक् मिथ्या भाव जगे।
दधि गुड़ या चूना हल्दी सम, मिश्रित जैसा भिन्न लगे॥2॥
अविरत सम्यक् दृष्टि चौथा, भेद ज्ञान प्रगटाता है।
त्रस हिंसा का त्यागी पंचम, देशव्रती कहलाता है॥
हो प्रमाद से युक्त महाव्रत, है प्रमत्त वह गुणस्थान।
अप्रमत्त होता प्रमाद बिन, ऐसा कहते हैं भगवान॥3॥
अष्टम गुणस्थान प्राप्त कर, उपशम क्षायिक श्रेणीवान।
हो परिणाम अपूर्व श्रेष्ठ शुभ, कहलाए अपूर्व गुणस्थान॥
भेद नहीं सम समय वर्ति में, अनिवृत्ती गुण कहलाए।
सूक्ष्म साम्पराय दसम गुणस्थान, सूक्ष्म लोभ युत पाए॥4॥
है उपशान्त मोह ग्यारहवाँ, मोह पूर्ण होवे उपशांत।
बारहवें गुणस्थान में भाई, पूर्ण मोह का होता अन्त॥
संयोग केवली कर्म घातिया, क्षयकर पाते गुणस्थान।
अयोग केवली योग नाशकर, चौदहवाँ पाते गुण स्थान॥5॥
गुण स्थानातीत सिद्ध जिन, सिद्ध शिला पर करते वास।
नित्य निरंजन अविनाशी हो, आत्म गुणों का करें प्रकाश॥
समवशरण में दिव्य देशना, देकर किया जगत कल्याण।
भव्य जीव जिन मार्ग प्राप्त कर, बनते अतिशय महिमावान॥6॥
अनन्तनाथ जिनवर अनन्त गुण, पाने वाले हुए महान।
शत इन्द्रों ने चरणों आकर, किया विनत होके गुणगान॥
'विशद' भाव से श्री अनन्त जिन की पूजा करने आए।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाने, भाव सहित कर में लाए॥7॥

दोहा कोटि सूर्य से भी अधिक, जिनवर ज्योर्तिमान।
जिन अनन्त तीर्थेश हैं, गुण अनन्त की खान॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- इस अपार संसार में, आप एक आधार।
अतः आपके पद युगल, वन्दन बारम्बार॥

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत)

श्री 1008 अनन्तनाथ भगवान की आरती

(तर्ज-आज थारी आरती उतारूँ)

श्री अनन्तनाथ भगवान, आज थारी आरती उतारें।
आरती उतारे थारी, मूरत निहारें॥
प्रभु कर दो विशद उद्धार, आज थारी आरती उतारें...
जयश्यामा माँ के सुत प्यारे, सिंहसेन के राजदुलारे।
जन्मे अयोध्या धाम, आज थारी आरती उतारें...॥1॥
पचास लाख पूरब की जानो, श्री जिनेन्द्र की आयु मानो।
सेही चिन्ह पहिचान, आज थारी आरती उतारें...॥2॥
पचास धनुष ऊँचाई पाए, स्वर्ण रंग तन का प्रभु पाए।
'विशद' ज्ञान के ताज, आज थारी आरती उतारें...॥3॥
कार्तिक वदी एकम को स्वामी, गर्भ में आए अन्तर्यामी।
ज्येष्ठ वदी द्वादशि जन्म, आज थारी आरती उतारें...॥4॥
जेठ वदी बारस तप पाए, चैत अमावस ज्ञान जगाए।
चैत अमावस मोक्ष, आज थारी आरती उतारें...॥5॥

श्री अनन्तनाथ चालीसा

दोहा- नव देवों के चरण में, वंदन बारम्बार।
अनन्तनाथ जिनराज का, चालीसा शुभकार।।

(चौपाई)

जम्बूद्वीप रहा शुभकारी, भरत क्षेत्र जिसमें मनहारी।
जिसमें कौशल देश बताया, नगर अयोध्या पावन गाया।।
राजा सिंहसेन कहलाए, इक्ष्वाकु वंशी शुभ गाए।
जयश्यामा रानी कहलाई, शुभ लक्षण से युक्त बताई।।
अच्युत स्वर्ग से चयकर आये, पुष्योत्तर विमान शुभ पाए।
श्री जिन माँ के गर्भ में आए, माता के सौभाग्य जगाए।।
ज्येष्ठ कृष्ण बारस शुभकारी, जन्म प्रभु पाये मनहारी।
राशि श्रेष्ठ मीन शुभ जानो, बृहस्पति स्वामी पहिचानो।।
तन का वर्ण स्वर्ण शुभ गाया, पग में सेही चिन्ह बताया।
तीस लाख वर्षों की भाई, अनन्तनाथ ने आयु पाई।।
धनुष पचास रही ऊँचाई, श्री जिनेन्द्र के तन की भाई।
पन्द्रह लाख वर्ष का स्वामी, राजभोग पाए शिवगामी।।
उल्का पतन देखकर भाई, हो विरक्त शुभ दीक्षा पाई।
शुभ नक्षत्र रेवती गाया, सांयकाल का समय बताया।।
नगर अयोध्या अनुपम जानो, सागरदत्त पालकी मानो।
आप सहेतुक वन में आए, पीपल वृक्ष श्रेष्ठ शुभ पाए।।
दीक्षा वृक्ष की शुभ ऊँचाई, छह सौ धनुष शास्त्र में गाई।
एक हजार नृपति शुभ आए, दीक्षा प्रभु के साथ में पाए।।
केशलुंच कर दीक्षा धारे, अपने सारे वस्त्र उतारे।
दो उपवास आपने कीन्हे, फिर क्षीरान्न आप शुभ लीन्हे।।
नगर अयोध्या में शुभ जानो, नृपति विशाखराज पहिचानो।
आहारदाता जो कहलाया, उसने अनुपम पुण्य कमाया।।

वन उपवन में ध्यान लगाए, दो वर्षों का समय बिताए।
कृष्णा चैत अमावस जानो, केवलज्ञान तिथि पहचानो।।
इन्द्र कुबेर आदि शुभकारी, देव चरण में आये भारी।
समवशरण रचना करवाई, खुश हो जय-जयकार लगाई।।
साढ़े पाँच योजन का भाई, मणि रत्नों का है सुखदाई।
पाँच हजार केवली गाए, पूरबधारी सहस बताए।।
साढ़े पैंतिस सहस निराले, शिक्षक शिक्षा देने वाले।
विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानी, पाँच सहस्र कही जिनवाणी।।
तैंतालिस सौ अवधिज्ञानी, बत्तिस सौ वादी विज्ञानी।
आठ सहस ऋद्धि के धारी, छियासठ सहस मुनि अविकारी।।
गणधर श्रेष्ठ पचास बताए, गणधर श्री जय प्रथम कहाए।
किन्नर यक्ष रहा शुभकारी, यक्षी वैरोटी मनहारी।।
एक माह पहले जिन स्वामी, योग निरोध किए शिवगामी।
गिरि सम्मेद शिखर शुभकारी, कूट स्वयंप्रभ है मनहारी।।
कृष्णा चैत अमावस जानो, अपरान्ह काल श्रेष्ठ पहिचानो।
रेवती शुभ नक्षत्र बताया, आसन कायोत्सर्ग कहाया।।
एक हजार शिष्य शुभ गाए, साथ में प्रभु के मुक्ति पाए।
शुभ अनुबद्ध केवली गाये, छत्तिस आगम में बतलाये।।
वीतराग जिनकी प्रतिमाएँ, भव्यों को शिवमार्ग दिखाएँ।
जिनबिम्बों के हम गुण गाते, नत हो सादर शीश झुकाते।।

सोरठा- चालीसा चालीस दिन, पढ़े सुने जो कोय।
ऋद्धि सिद्धि सौभाग्य श्री, सुख समृद्धि होय।।
गुण अनन्त के कोष हैं, अनन्त नाथ भगवान।
उनकी अर्चा से मिले, 'विशद' शीघ्र निर्वाण।।

जाप्य ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमः सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा।

प्रशस्ति

दोहा

भरत क्षेत्र में जम्बू द्वीप, आरज खण्ड प्रधान।
भारत देश का हृदय जो, मध्य प्रदेश है नाम॥
नाथूराम जी जैन का, रहा कुपी में धाम।
जिला छतरपुर में शुभम्, आता है यह ग्राम॥
जिनके गृह में जन्म ले, पाया नाम रमेश।
विराग सिन्धु के चरण में, धरा दिगम्बर वेष॥
सन् उन्नीस सौ छियानवे, आठ फरवरी जान।
मुनि दीक्षा पाए विशद, करने निज कल्याण॥
दो हजार सन् पाँच की, तेरह फरवरी खास।
पद आचार्य धारा गुरु, भरत सिन्धु के पास॥
तीन लोक में श्रेष्ठ है, भारत देश महान।
राजधानी है देश की, दिल्ली श्रेष्ठ प्रधान॥
जैन धर्म का केन्द्र है, रहते जैन अनेक।
देव शास्त्र गुरु की करें, अर्चा माथा टेक॥
बीस सौ बारह का किया, पावन वर्षा योग।
शास्त्री नगर को शुभ मिला, इसका सद संयोग॥
वीर निर्वाण पच्चीस सौ, उन्तालीस शुभकार।
कार्तिक शुक्ला दशे तिथि, दिन पाया शुक्रवार॥
भक्ति भाव मन में जगा, किया प्रभु गुणगान।
अनन्त नाथ जिनराज का, लिक्खा गया विधान॥
पार्श्वनाथ जिनराज का, मंदिर बना महान।
न्यू रोहतक शुभ रोड़ पर, किया गया गुणगान॥
पर्व अठाई में यहाँ, सिद्ध चक्र का पाठ।
भक्तों ने जिन भक्ति से, किया दिनों तक आठ॥
लघु धी तथा प्रमाद से, हुई हो कोई भूल।
ज्ञानी जन उसको करें, पढ़कर के निर्मूल॥

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज: माई री माई मुंडरे पर तेरे बोल रहा कागा...)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारें, आरति मंगल गावें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्....4 मुनिवर के....
ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता॥
सत्य अहिंसा महाव्रती की...2, महिमा कही न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्....4 मुनिवर के....
सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया॥
जग की माया को लखकर के....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के....
जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा॥
गुरु की भक्ति करने वाला...2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्....4 मुनिवर के....
धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे॥
आशीर्वाद हमें दो स्वामी....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के...जय...जय॥

रचयिता : **श्रीमती इन्दुमती गुप्ता**, श्योपुर